द्वितीय अध्याय

छायावादी काव्य-धारा का स्वरूप

- छायावाद : परिभाषा, स्वरूप
- छायावाद के प्रमुख कवि
  - वृहत्रयी--धारा--प्रसाद, पन्त, निराला
  - लघुत्रयी--धारा'--महादेवी वर्मा, रामकुमार वर्मा, भगवतीचरण वर्मा

द्वितीय अध्याय

छायावादी काव्य–धारा का स्वरूप

छायावाद आधुनिक हिन्दी काव्य की एक अत्यन्त विकसित एवं क्रांतिकारी काव्यधारा है। 19वीं शताब्दी तथा 20वीं शताब्दी के आरम्भिक दो दशक नवजागरण काल के अन्तर्गत आते हैं। इसी कालखण्ड में छायावाद पनपता है। राष्ट्रीय नवजागरण और भारतीय मुक्ति आंदोलन की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कई महत्वधूर्ण घटनाओं ने भारतीय भाषाओं को चेतना और शिल्प दोनों ही स्तरों पर आंदोलित किया। इसी की परिणति छायावाद के विद्रोही स्वरों में मुखर होती है। 1947 ई0 के पहले लगभग 150 वर्षों में भारतीय जनता ने दीर्घकालीन स्वाधीनता–संग्राम तथा कई सामाजिक, बौद्धिक आन्दोलनों के बीच से जो सांस्कृतिक और साहित्यिक मूल्य निर्मित किये, उसने ही छायावादी रचनाओं की अंतर्वस्तु और बाह्य रूपाकृति का निर्माण किया। छायावादी कविता में प्रकृति की सौन्दर्यमूलक चेतना ही नहीं मिलती वरन् समष्टिगत सौन्दर्यमूलक विराट चेतना भी उपलब्ध होती है। छायावाद पर 19वीं शताब्दी के अंग्रेंजी कवियों मुख्यतः शैली, वर्ड्सवर्थ, कीट्स, बायरन, और टेनीसन का विशेष प्रभाव पड़ा। यहाँ तक कि इनके बाद के कवियों जैसे स्विनबर्न, ब्राउनिंग, टामसहर्जि, ईट्स आदि का भी प्रभाव छायावाद पर पड़ा। तद्नन्तर दूसरे दशक के बाद की कविता को छायावाद का जो अभिधान दिया गया है, यह संज्ञा भी अवमानना के स्वर में विरोध एवं नकार के भाव का ही द्योतन करती है। छायावाद के रूप–स्वरूप को लेकर प्रारम्भ से ही बड़ी उठापटक होती रही है, परन्तु आज यह काव्यधारा परस्पर अनेक वाद–विवादों के बावजूद अपना एक निश्चित स्वरूप और अपनी पूरी स्थिति निर्मित कर चुकी है। बहुधा जब कोई काव्यधारा अपना एक पूर्ण सुचिन्तित निश्चित कलेवर प्राप्त कर लेती है, उसके बहुत दिनों बाद तक भी उसका समस्त कृतित्व प्रकाश में शनैः–शनैः आता रहता है। ऐसी स्थिति में उसकी पुर्नव्याख्या एवं पुनर्मूल्यांकन से अनेक चौकाने वाले तथ्य सामने आते रहते हैं, जो अध्ययन में सहायक बनते चलते हैं। छायावादी कविता के मूल्यांकन के सन्दर्भ में अब तक के चिन्तन–मनन

को अधोलिखिति बिन्दुओं के अन्तर्गत रखकर देख, समझ और विश्लेषित कर सकते हैं।

- लोकमंगल की जीवन–दृष्टि से प्रभावित नैतिक एवं परंपरावादियो का छायावादी विवेचना का स्वरूप–आचार्य द्वय पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी और आचार्य शुक्ल के विचार।
- समाजशास्त्रीय पद्धति का सहारा लेकर छायावाद की विवेचना का स्वरूप–मार्क्सवादी दृष्टि।
- मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर छायावादी विवेचना का स्वरूप–डॉ0 नगेन्द्र की विचारणा
- सौष्ठववादी समीक्षण पद्धति के आधार पर छायावादी विवेचना का स्वरूप।
- डॉ0 नन्ददुलारे वाजपेयी एवं छायावादी कवियों के अभिमत

➢ लोकमंगल की जीवन-दृष्टि से प्रभावित :–

नैतिकतावादियों एवं रसवाद से प्रभावित परंपरावादियों का छायावाद संबंधी विवेचना का स्वरूप हमें आचार्य द्वय–पं महावीर प्रसाद द्विवेदी एवं पं० रामचन्द्र शुक्ल में देखने को मिलता है जो छायावाद को अकाव्य के रूप में घोषित कर इसे शैली भर की संज्ञा प्रदानते हैं। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का छायावाद के प्रति नजरिया इसी बात से आँका जा सकता है कि उन्होंने 1916 में रचित 'निराला' जी की प्रथम कविता 'जूही की कली' का प्रकाशन 'सरस्वती' में नहीं किया और जो समझ मे न आए, उसे छायावाद काव्य ठहराया। आचार्य शुक्ल ने अपनी नैतिक, लोकादर्शवादिनी और प्रबन्ध काव्योचित समीक्षा के चश्मे से जब सद्यः जात शिशु 'छायावाद' को देखा, तो वे भी उसके साथ न्याय न कर सके। शुक्ल जी को पंत, प्रसाद और महादेवी की काव्य–धारा की तुलना में श्रीधर पाठक और मुकुटधर पाण्डेय आदि की काव्यधारा में

हिन्दी का अधिक मंगल दिखाई दिया। शुक्ल जी का आलोचक 'निराला' की अपेक्षा पं0 सोहन लाल द्विवेदी को प्रौढ़ कवि मानने का पक्षधर था। फिर भी शुक्ल जी अन्य समकालीन आचार्यो एवं समीक्षकों की अपेक्षा अधिक प्रगतिशील एवं स्वच्छंद प्रकृति के आलोचक थे जिन्होंने छायावाद को अपनी निजी दृष्टि से गुण–दोषों के आधार पर विवेचित करते हुए वस्तु और शैली–दोनों माना। उनके अभिमत से छायावाद एक शैली विशेष है और वस्तु की दृष्टि से ईसाई सन्तों के छायाभास Phantasmata तथा यूरोपीय काव्य क्षेत्र में प्रदर्शित आध्यात्मिक प्रतीकवाद Symboalism का अनुकरण है। शुक्ल जी लिखते हैं —

''छायावाद जहाँ तक आध्यात्मिक प्रेम लेकर चला है वहाँ तक तो रहस्यवाद के अन्तर्गत ही रहा है। इसके आगे प्रतीकवाद था चित्रभाषावाद नाम की काव्य शैली के रूप में गृहीत होकर भी वह अधिकतर प्रेमगान करता रहा।''[1] छायावाद ने काव्य के कलापक्ष में जो नवीन प्रगति की उसकी जो नवीन विकास की ओर उन्मुख किया उसका महत्व शुक्ल जी ने मुक्त कण्ठ से स्वीकारा, वे लिखते हैं:

''छायावाद की शाखा के भीतर धीरे–धीरे काव्य शैली का बहुत अच्छा विकास हुआ इसमें सन्देह नहीं। इसमें भावावेश की आकुल व्यंजना लाक्षणिक वैचित्र्यमूर्त प्रत्यक्षीकरण, भाषा की वक्रता–विरोध–चमत्कार, कोमल पद–विन्यास इत्यादि काव्य का स्वरूप संगठित करने वाली प्रचुर सामग्री दिखाई पड़ी।''[2] शुक्ल जी जैसे प्रतिभावान समीक्षक के मूल्यांकन के लिए छायावाद का सर्वश्रेष्ठ उपलब्ध था । तब भी उन्हें हिन्दी छायावाद में बंगला की छाया ही दिखाई दी। बंगला छायावाद के बारे में शुक्ल जी की राय कुछ इस प्रकार थी —

---

[1] आचार्य शुक्ल–हिन्दी साहित्य का इतिहास–पृ० 355

[2] वही

"पुराने ईसाई संतो के छायाभास तथा यूरोपिय काव्य क्षेत्र में आध्यात्मिक प्रतीकवाद के अनुकरण पर रची जाने के कारण बंगला में ऐसी कविताएँ छायावाद कही जाने लगी।"[3]

शुक्ल जी के छायावादी विवेचना के परिणाम स्वरूप हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि शुक्ल जी को छायावादी काव्य में साम्प्रदायिकता का भान होता है और वह रहस्यवादी काव्य को भी अधिकतर साधनापरक और साम्प्रदायिक बतलाते हैं परन्तु हिन्दी के छायावादी काव्य को फैटैसमाटा की परिधि में ही रख देना न्याय संगत प्रतीत नहीं होता और न ही महादेवी के रहस्यवादी काव्य को साम्प्रदायिकता की भूमि पर रख कर परखना।

➢ **समाजशास्त्र पद्धति का सहारा लेकर :–**

छायावादी काव्य की विवेचना का स्वरूप मार्क्सवादी चिन्तकों की समीक्षा कृतियों में देखा जा सकता है। डॉ0 नामवर सिहं ने छायावाद को उस राष्ट्रीय जागरण की अभिव्यक्ति माना है जो एक ओर पुरानी रूढ़ियों से मुक्ति पाना चाहता था और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से। वे छायावाद को अनेक प्रवृत्तियों का पुंज समझते हैं। इनमें रहस्यवाद तथा स्वच्छन्दतावाद भी समाहित हो जाते हैं। इसका उदाहरण देते हुए डॉ0 नामवर सिंह लिखते हैं कि "पंत के मौन निमंत्रण' में अज्ञात की जिज्ञासा होने के कारण रहस्यवाद है, अभिव्यक्ति की सूक्ष्मता के कारण छायावाद है और कल्पनालोक में स्वच्छन्द विचरण के कारण स्वच्छन्दतावाद भी है।"[4]

डॉ0 नामवर सिंह के "मौन निंमत्रण' में अज्ञात की जिज्ञासा से रहस्यवाद, कल्पना लोक में स्वच्छन्द विचरण से स्वच्छन्दतावाद और अभिव्यक्ति की सूक्ष्मता से छायावाद का दिग्दर्शन इन तीनों वादों में किंचित अन्तर को मान्यता देता है। यदि छायावाद को अंग्रेज़ी रोमाण्टिकतावाद के रूप में उससे व्यवस्थित सम्बद्ध करके

---

[3] डॉ० कृष्ण चन्द्र वर्मा–छायावादी काव्य–पृ० 25

[4] डॉ० नामवर सिंह–छायावाद–पृ० 14

व्यवस्थापित करना है, जैसा कि मार्क्सवादियों का मानना है तो छायावाद की यह प्रमुख विशेषताओं में से एक प्रमुख विशेषता ठहरती है।

➢ मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के आधार :–

मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के आधार पर छायावाद और उसकी रचनाओं का मूल्यांकन अतृप्त भावनाओं एवं दमित वासनाओं की अभिव्यक्ति के रूप में आंका गया है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि दर्शना से डॉ० नगेन्द्र का मत बहुत ही सन्तुलित एवं सार्थक जँचता है। वे छायावाद को स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह अति आग्रह तथा मूर्त के प्रति अमूर्त का विद्रोह मानते हैं। इनका विश्लेषण है–"छायावाद एक विशेष की भाव पद्धति है, जीवन के प्रति एक विशेष भावात्मक दृष्टिकोण है जिस प्रकार भक्ति काव्य जीवन के प्रति एक विशेष प्रकार का भावात्मक दृष्टिकोण है इस दृष्टि का आद्येय नवजीवन के स्वप्नों और कुंठाओं के सम्मिलन से बना है। प्रवृत्ति अन्तर्मुखी तथा वायवी है और अभिव्यक्ति हुई है प्रायः प्रकृति के प्रतीकों द्वारा"[5]

इस प्रकार छायावाद के विवेचन में विद्वानों की अपनी–अपनी वैयाक्तिक रूचियाँ रही हैं। सुरूचि संपन्न जागरूक पाठक से लेकर विभिन्न आलोचना सिद्धान्तो के पक्षधर सुधी आलोचकों तक ने छायावादी कविता को अपने–अपने ढंग से आत्मसात करके व्याख्यायित करने के प्रयंत्न किये हैं, जो न केवल आलोचकों की विभिन्न एवं परस्पर विरोधी दृष्टियों का परिचायक है अपितु आलोचना जगत में व्याप्त अराजकता का भी द्योतक है।

➢ सौष्ठववादी समीक्षा पद्धति :–

सौष्ठववादी समीक्षा पद्धति के समालोचकों ने छायावाद को नवीन सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यंजना के प्रतीक रूप में देखा है, जिसमें जीवन संस्कृति का स्पंदन–व्यक्तिवादी स्वर का गुंजन–ध्वनन प्रकृति का निसर्गजात चित्रण, नारी की नवीन परिकल्पना, पीड़ा अवसाद आशा एवं उत्साह, सूक्ष्मता एवं अन्तर्मुखता का युगपद

---

[5] डॉ० शिवकुमार शर्मा–हिन्दी साहित्यः युग और प्रवृत्तियाँ–482–483

समज्जन देखने को मिलता है। सौष्ठववादी और प्रभावभिव्यंजक अपेक्षाकृत अधिक तटस्थ और निरपेक्ष आलोचक होते हैं। उनमें निश्चित मानों के आधार पर किसी कृति का मूल्यांकन करने तथा निर्णय देने की प्रवृत्ति का अभाव होता है, कम–से–कम प्रत्यक्ष रूप से तो वे अपनी आलोचना में इसका आभास नहीं होने देते। मूल्यांकन और निर्णय आलोचना के दोनों ही मूलभूत तत्त्व किसी न किसी रूप में प्रत्येक आलोचक में विद्यमान रहते हैं, भले ही वह चाहे इसे अस्वीकारे।

➢ डॉ0 नन्ददुलारे वाजपेयी एवं छायावादी कवियों के अभिमत :–

डॉ0 नन्ददुलारे वाजपेयी का मानना है कि हिन्दी का छायावादी काव्य स्वच्छन्दतावाद की व्यापक भूमिका पर ही लिखा गया है। आधुनिक छायावादी और रहस्यवादी काव्य रचनाएँ स्वच्छन्दतावाद की ही विभिन्न शैलियाँ हैं। उन्हें स्वच्छन्दतावाद से पृथक करके देखने का प्रयास समीचीन नहीं किया जा सकता है।''[6]

छायावाद का नामकरण करने वाले पहले व्यख्यात कवि मुकुटधर पांण्डेय थे जिन्होंने जबलपुर से प्रकाशित पत्रिका 'श्री शारदा' में छायावाद का आरम्भिक विवेचन करते हुए 1920 में जुलाई–सितम्बर, नवम्बर, और दिसम्बर के अंकों में हिन्दी छायावाद से सम्बन्धित क्रमशः 'कवि स्वातंत्र्य' 'छायावाद क्या है'? और 'हिन्दी में छायावाद' 'शीर्षक से चार' लेख लिखे। इसी के आसपास छायावाद के प्रतिष्ठापक कवियों ने अपनी–अपनी अवधारणाओं को तार्किक ढंग से प्रतिष्ठापित किया। इनमें प्रसाद जी का छायावादी विवेचन विशेष उल्लेखनीय एवं प्रमाणिक है। प्रसाद जी ने छायावाद के यथातथ्य रूप की व्याख्या करके इसके बारे में फैली हुई भ्रान्तियों का निरसन किया। प्रसाद जी छायावाद का विवेचन करते हुए लिखते हैं–''कविता के क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी घटना अथवा देश–विदेश की सुन्दरी में वाह्य वर्णन से भिन्न जब वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी, तब हिन्दी में उसे छायावाद के नाम से अभिहित किया गया ....ये नवीन भाव आन्तरिक स्पर्श से पुलकित थे।''[7]

---

[6] आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी–आधुनिक काव्य : रचना और विचार पृ० 34–35

[7] प्रसाद–काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध–पृ० 21–22

प्रसाद जी ने अपने उक्त कथन में कवि की स्वानुभूति के तीव्र आवेश की अभिव्यक्ति को ही छायावाद कहा है। इससे वे आत्माभिव्यंजन को ही इसका प्रमुख तत्त्व मानते हैं। महादेवी वर्मा ने छायावाद का मूल दर्शन 'सर्वात्मवाद' के रूप में स्वीकार करते हुए प्रकृति को उसका साधन माना है। "छायावाद ने मनुष्य के हृदय और प्रकृति के उस संबध में प्राण डाल दिये, जो प्राचीन काल में बिंब–प्रतिबिंब के रूप में चला आ रहा था और जिसके कारण मनुष्य को प्रकति अपने दुःख में उदास और सुख में पुलकित जान पड़ती थी। छायावाद की प्रकृति घटकूप आदि में भरे जल की एक रूपता के समान अनेक रूपों में प्रकट एक महाप्राण बन गयी, अतः अब मनुष्य के अश्रु, मेघ के जलकण और पृथ्वी के ओस बिन्दुओं का एक ही कारण, एक ही मूल्य है।"[8]

महादेवी ने छायावाद में प्रकृति के साथ रागात्मक संबंध का प्रतिपादन विशेष तौर पर माना है। महादेवी के मतानुसार छायावाद कवि व्यक्त रूप में जो अनुभव करता है वह उसकी स्वच्छन्द अनुभूति है, प्रकृति के नानातत्त्व में एक महाप्राण का अनुभव सर्वात्मवाद है असीम के प्रति अनुरागजन्य आत्मविसर्जन का भाव है, स्थूल की प्रतिक्रिया एवं सूक्ष्म सौन्दर्य सत्ता की और जागरूकता है, युगानुरूप वेदना की विवृत्ति है और युगानुरूप प्रतीकों द्वारा गीतात्मक पद्धति पर भावनाओं की अभिव्यक्ति है।

"छायावाद" का केवल पहला अर्थात् मूल अर्थ लेकर तो हिन्दी काव्य–क्षेत्र में चलने वाली श्रीमती महादेवी वर्मा ही हैं। पंत, प्रसाद, निराला इत्यादि और सब कवि प्रतीक पद्धति या चित्रभाषा शैली की दृष्टि से ही छायावादी कहलाए। यहाँ तक हमने छायावाद को विविध दृष्टिकोणों से देखने और समझने का प्रयास किया। अब इसी क्रम में छायावाद के वृहत्रयी और लघुत्रयी कवियों के बारे में विचार करेंगे।

छायावाद के प्रमुख सर्जक साहित्यकार प्रसाद, पन्त, निराला, महादेवी वर्मा, रामकुमार वर्मा और भगवतीचरण वर्मा आदि प्रमुख हैं। इन्हें अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। वृहत्रयी और लघुत्रयी। वृहत्रयी में प्रसाद,

[8] महादेवी वर्मा–साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध–पृ० 66

निराला, पंत, और लघुत्रयी में महादेवी वर्मा, रामकुमार वर्मा और भगवतीचरण वर्मा का परिगणन किया जाता है। इसी क्रम में हमें इनका अध्ययन अभीष्ट है।

जयशंकर प्रसाद (1889–1937)

जयशंकर प्रसाद (1889–1937) छायावाद के सर्वप्रमुख कवि हैं। प्रसाद जी का साहित्य उनकी जन्मजात रचनात्मक प्रतिभा एवं पूर्वजों द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त साहित्यिक रूचि का परिणाम है। शैशवावस्था से ही उनकी प्रतिभा साहित्यिक सर्जना के रूप में प्रकट होने लगी थी। प्रसाद जी ने अपने इस छोटे से जीवन में बहुत बड़े काम किये। उन्होंने कविता के क्षेत्र में छायावादी काव्यधारा का प्रवर्तन कर उसे चरम उत्कर्ष पर पहुँचाया। उनकी काव्यकृति 'झरना', 'आँसू', 'लहर' और 'कामायनी' के आधार पर प्रसाद जी छायावाद के ब्रह्मा कहलाने के अधिकारी हुए हैं। 'झरना' प्रथम बार 1918 में प्रकाशित हुआ, जबकि 'आँसू' 1930–32 में। 'प्रेम पथिक' भी छायावादी रचना ही कही जायेगी। छायावाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ पहली बार 'झरना' में प्रकट हुई। 'कामायनी' प्रसाद की सर्वोत्कृष्ट छायावादी कृति है और छायावाद की अन्यतम रचना। इसमें छायावाद की सभी प्रमुख विशेषताएँ सहज ही मिल जाती हैं। छायावादी प्रसाद के विलक्षण कवित्व का चरमोत्कर्ष इसी कृति में देखने को मिलता है। यह प्रेम, नारी और प्रकृति के सौन्दर्य का उद्‌घाटन करने वाली अद्‌भुत रचना है। श्रद्धा, मनु, इड़ा पात्र भी है और प्रतीक भी। इन्हीं के माध्यम से युग–चेतना मुखरित हुई है। यह कृति व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक विकास, अन्तर्जगत के विन्यास, आधुनिक सभ्यता के स्वरूप, बौद्धिक जाग्रति और मानव–अन्तर्द्वन्द का चित्र उपस्थित करती है। श्रृद्धा नारी गौरव का प्रतीक है। मनु एक समृद्धिकामी सामान्य पुरूष के रूप में चित्रित है। इड़ा को आधुनिक पूंजीवादी समाज के वर्ग भेद और शोषण की मान्यताओं पर आधारित बुद्धि तत्त्व का प्रतीक कहा जा सकता है। 'कामायनी' निश्चय ही छायावाद की सर्वश्रेष्ठ रचना है।

आँसू प्रेम काव्य है। कवि की स्वयं की प्रेमानुभूति की अभिव्यंजना उसमे बड़े ही प्रभावशाली ढंग से हुई है। प्रेम का वियोग पक्ष ही, वास्तव में अधिक मधुर अधिक

मर्मस्पर्शी होता है। इससे पूर्व व्यक्तिगत विरह–वेदना की इतनी मार्मिक अभिव्यक्ति हिन्दी काव्य में नहीं हुई थी। इस काव्य में विरह–व्यथित मानवचेतना का करूण–क्रन्दन बड़े ही हृदयविदारक शब्दों में व्यक्त हुआ है–

"रो रो कर सिसक सिसक कर

कहता मैं करूण कहानी

तुम सुमन नोचते चुनते

करते जानी अनजानी"[9]

निष्कर्षतः छायावाद का जो रूप 'झरना' में अज्ञात अनंत प्रियतम के प्रति रहस्यात्मक प्रेमानुभूति की प्रतीकात्मक व्यंजना से आरम्भ हुआ था, वह 'आँसू' में लौकिक विरहानुभूति की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के रूप में विकसित हुआ। 'लहर' में लौकिक प्रेम और विरह की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के साथ ऐतिहासिक कथावस्तु का आधार लेकर मानव हृदय की भावनाओं को व्यंजित करने की प्रवृत्ति भी छायावाद के साथ जुड़ गयी। कामायनी ने सिद्ध कर दिया कि तत्त्व दर्शन तथा मानव का मनोवैज्ञानिक विकास और जीव की समरसता से विषमता और विषमता से समरसता की यात्रा आदि सब कुछ छायावाद का विषय बन सकता है और प्रतीक शैली में सटीक उपमानों तथा लाक्षणिक ओर व्यंजक पदावली के द्वारा उसकी अत्यन्त रसमयी सृष्टि की जा सकती है।

---

[9] प्रसाद–आँसू–पृ० 15

सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" (1899–1961)

छायावादी वृहत्रयी के दूसरे सर्वाधिक महत्वपूर्ण कवि पं0 सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला हैं। निराला (1899–1961) युग –चेतना, संघर्ष प्रियता, क्रांन्ति, पौरूष और ओज के कवि हैं। वे तीक्ष्ण व्यंगकार के रूप में विश्व प्रसिद्ध हैं। महाप्राण निराला सदैव निराले कवि ही रहे। उन्हें सदैव अपने में एक कवि की वाणी कलाकार के हाथ, पहलवान की छाती और फिलोसफर के पैर पर गर्व रहा। निराला का साहित्य अनुभूति से पुरातन ओर अभिव्यक्ति से अधुनातन है। वे एक ओर पूरे वेदान्ती, दार्शनिक और अहंवादी हैं, तो साथ ही साथ दूसरी ओर उदारमना, संवेदना के कारण पद–दलितों के हिमायती भी हैं। छायावाद की दोनों प्रमुख प्रवृत्तियों –प्रकृति–प्रेम और आध्यात्मिक प्रेम को विकासोन्मुख करते हुए अद्वैत–दर्शन की दृढ़ भित्ति निराला ने ही प्रदान की। निराला ने निश्चय ही प्रलयंकर शिव के समान स्वयं विषपान करके हिन्दी –काव्य –जगत को पीयूषपान कराया। "निराला ने 1920 ई॰ के लगभग काव्य–रचना आंरम्भ की और 1961 तक लिखते रहे। उनके इस इकतालीस वर्ष के रचनाकाल को निराला रचनावली के संपादक नवलकिशोर नवल ने तीन चरणों में विभाजित किया है।"[10]

प्रथम चरण :– प्रथम 'अनामिका', 'परिमल', 'गीतिका', 'द्वितीय अनामिका', 'तुलसीदास'

द्वितीय चरण :– 'कुकुरमुत्ता'–'अणिमा', 'बेला', 'नये पत्ते'

तृतीय चरण :– 'अर्चना', 'आराधना', 'गीत', 'गुंज', 'सांध्यकाकली'

निराला के प्रथम काव्य चरण में छायावादी प्रवृत्ति की प्रधानता है। द्वितीय में प्रगतिवादी प्रवृत्ति की और तृतीय में आत्मनिवेदन की, किन्तु ऐसा नहीं है कि निराला प्रथम चरण में केवल छायावादी द्वितीय में केवल प्रगतिवादी और तृतीय में विशुद्व रूप से आत्मलीन हो गए थे। वस्तुतः ये तीनों ही प्रवृत्तियां निराला के काव्य में आरंभ से अंत तक दिखाई देती हैं, अंतर मात्र इतना है कि किसी काल विशेष में उनका झुकाव

---

[10] ऋषि कुमार चतुर्वेदी–आधुनिक हिन्दी कवि–पृ० 149

किसी एक प्रवृत्ति की ओर अधिक रहा है। निराला का काव्य तो उनके समग्र व्यक्तित्व की निश्च्छल अभिव्यक्ति है। उनका दुर्दम आवेगपूर्ण और अनगढ़ व्यक्तित्व उनके काव्य में सर्वत्र बोलता है।

निराला का प्रथम काव्य संग्रह 'परिमल' है जो परिमल के समान ही छायावाद की ऐतिहासिक प्रतिनिधि रचना है। इसमें 'जूही की कली', 'पंचवटी', 'विधवा', 'भिक्षुक' आदि कविताऐं अत्यन्त प्रभावशाली हैं। इनकी रचना में रहस्य भावना, करूणा, प्रेम और सौन्दर्य की मार्मिक अभिव्यंजना हुई है। राष्ट्रीय चेतना की सूक्ष्म अनुभूतियों की अभिव्यक्ति जितनी 'परिमल' में हुई, उतनी छायावाद की किसी अन्य रचना में उस समय तक नही हुई थी। निराला की बहुवस्तु स्पर्शिनी प्रतिभा के शुक्ल जी भी कायल थे जिसके व्यापक रूप में दर्शन इस संग्रह में होते हैं। इसी संग्रह में 'महाराज शिवाजी का पत्र' नामक रचना है जो छायावादी कवि निराला की युग की परिस्थितियों के प्रति तीव्र सजगता का सशक्त प्रमाण है। महाराज शिवाजी की वाणी के आवरण में कवि मानो स्वयं अपने दासताग्रस्त देशवासियों की आँखे खोल रहा है–उन्हें साम्राज्यवादी, आतातायी शासकों की शोषण प्रधान भेद–प्रसारक कूटनीति से अवगत करा रहा है।

'विधवा' इसी संग्रह की लोक–विचुत कविता है जिसमें दलित भारत की 'विधवा' का कवि ने अत्यन्त हृदयविदारक दृश्य उपस्थित किया है।

'अनामिका' एक गीत संग्रह है जो उन परिस्थितियों में विशेष लोकप्रिय हुआ था। 'सरोज–स्मृति,' 'तोड़ती पत्थर,' जैसी प्रभावशाली रचनाएँ इसी संग्रह में हैं इसमें अनेक प्रकार के विषयों पर रचनाऐं संग्रहीत हैं। व्यक्तिगत प्रेम, राष्ट्र–प्रेम, और प्रकृति प्रेम पर निराला जी ने अनेक रचनाएँ लिखीं। 'सरोज–स्मृति' में उनकी पुत्री की बाल्यकाल की स्मृतियाँ हैं। और पत्नी की मृत्यु से उत्पन्न स्थितियों के चित्रण के साथ–साथ सामाजिक रूढ़ियों पर बड़ा मार्मिक व्यंग्य है।

'तोड़ती पत्थर' में दीन दलितों के प्रति सहानुभूति व्यक्त हुई है और इसी के साथ उनकी रचनाओं में आक्रोश और विद्रोह न होकर सहानुभूति ओर वेदना का स्वर सुनाई देता है।

निराला का काव्य तो उनके समग्र व्यक्तित्व की निश्च्छल अभिव्यक्ति है जैसे ऊपर सांकेतित है, उनका दुर्दन आवेगपूर्ण और अनगढ़ व्यक्तित्व ही उनकी कविता की सबसे बड़ी विशेषता है। वैयक्तिक घटनाओं और अनुभूतियों की ऐसी सीधी किंतु रसमयी अभिव्यक्ति हिन्दी के दूसरे कवि ने नहीं की। निराला का जीवन आरम्भ से ही संघर्षमय रहा है। इस संघर्ष ने उन्हें ईश्वर के प्रति दृढ़ विश्वासी और सहज आस्थावान बना दिया। लेकिन दीन–दुर्बल, रूढ़िग्रस्त, हतदर्प जाति को भी उन्होंने देखा। उसे कभी आगे बढ़ने के लिए ललकारा, कभी नवयुग के आगमन की सूचना दी कभी उस पर व्यंग्य किया तो कभी अतीत के गौरव की याद दिलाई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि छायावादी वृहत्रयी के इस मूर्धन्य कवि के काव्य में करूणा, प्रेम, राष्ट्रीय चेतना की सूक्ष्म अभिव्यक्ति, और दीन–दलितों के प्रति सहानुभूति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इसी के साथ निरालाजी ने हिन्दी कविता को छंद के बन्धन से मुक्त करके उसे अमर वरदान से अभिमण्डित किया।

सुमित्रानन्दन पंत (1900–1977)

कविवर पं0 सुमित्रानन्दन पंत प्रकृति के अत्यन्त ही सुकुमार कवि के रूप में जाने जाते हैं। उनके काव्य में कोमल भाव तरंगें उदात्त कल्पना के बहुरंगी छटा में जब विकसित होती है। तो वह सहज ही सहृदय मन को बरबस आकर्षित करती है। पंत जी ने विपुल साहित्य की रचना की है। 'वीणा', 'ग्रन्थि' 'पल्लव' 'गुंजन', 'युगान्त' के आधार पर पंत जी छायावादी काव्य–धारा के विष्णु कहे जाते हैं। इन्हीं कृतियों में छायावादी कवि को सम्पूर्ण अभिव्यक्ति मिली है। पंत जी ने अपनी कविता में नये जीवन–मूल्यों की खोज की है। इस खोज में वे अपने समय की मुख्य–मुख्य चिंताधाराओं से प्रभावित होते रहे हैं। आंरभ में रवीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रभाव से जो नूतन काव्य दृष्टि हिन्दी में आई वह छायावाद के रूप में विकसित हुई। 'पल्लव' की भूमिका

में उन्होंने मध्ययुगीन काव्य–मूल्यों पर प्रहार करते हुए कविता के क्षेत्र में एक नये मूल्य बोध को जन्म दिया। इसी के साथ पल्लव की अधिकांश रचनाऐं प्राकृतिक सौन्दर्य पर रची गयीं।

'गुंजन'–काल की रचनाओं में जीवन–विकास के सत्य पर कवि का विश्वास प्रतिष्ठित हो चुका था। इस संग्रह में कवि युगीन वास्तविकता से ऊपर उठकर स्थायी वास्तविकता के गीत गाता है।

'युगांन्त' कवि की क्रांतिकारी भावनाओं का संग्रह है– उसमें नवीन मनुष्यत्व और नवीन मानवता की ओर संकेत किया है। "बाह्य क्रांन्ति" के साथ ही कवि का मन अन्तः क्रान्ति का नवीन मनुष्यत्व की भावनात्मक उपलब्धि का भी आकांक्षी बन जाता है।

'ग्रन्थि' पंत के स्वच्छन्द प्रेम की उन्मुक्त अभिव्यक्ति है। इसमें नारी और प्रकृति के सौन्दर्य का चित्रण प्रमुख है। प्रेम नामक भाव की प्रतिक्रिया का मनोवैज्ञानिक चित्रण इस कृति में बड़े ही सुन्दर ढंग से हुआ है।

तत्पश्चात पंत जी अपने युग के दो क्रांतदर्शी महापुरूषों मार्क्स और गाँधी से अत्यधिक प्रभावित हुए इन महापुरूषों के चिन्तन को आधार बनाकर उन्होंने मध्ययुगीन जीवन मूल्यों के स्थान पर नये जीवन–मूल्यों की स्थापना की खोज की जो 'ज्योत्सना', 'युगपथ', 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' की कविता में व्यक्त हुए हैं। किन्तु इस खोज से उन्हें संतोष नहीं हुआ। आगे वे महर्षि अरविन्द से प्रभावित हुए और उनके दर्शन को आधार बनाकर अपनी जिस जीवन दृष्टि का निर्माण किया, 'स्वर्ण किरण' से लेकर 'संक्रान्ति' तक उनका काव्य उसी की धूरी पर घूमता रहा।

'संक्रान्ति' के कुछ गीत 1977 के चुनावों में लोकतंत्र की अप्रितम विजय को लक्ष्य करके लिखे गए। किंतु मुख्य रूप से कवि का केन्द्र उस सर्वोच्च चेतना के धरती पर अवतरण से जन्मी नूतन संस्कृति का आख्यान ही रहा है, जहाँ मानव की सारी

दुर्बलताऐं दूर हो गई हैं, दुख समाप्त हो गए हैं, अध्यात्म और भौतिकता का एकीकरण हो गया है और जीवन स्वर्ग बन गया है।

इस प्रकार पंत जी की काव्ययात्रा के तीन प्रमुख सोपान होते हैं। पहला यह जिसे छायावाद काव्यधारा के नाम से जाना जाता है। दूसरे को हम मार्क्स और गाँधी का प्रभाव काल कह सकते हैं तथा तीसरे को महर्षि अरविन्द का प्रभाव काल। इन तीनों में क्रमशः सौन्दर्य–चेतना, सामाजिक चेतना, सांस्कृतिक चेतना की प्रमुखता रही। अतः इससे स्पष्ट हो जाता है कि पन्त जी प्रकृति, लोकमानवता, मानव मन के सौन्दर्य की स्वाभाविक अथवा कल्पनामयी व्याख्या, जन संस्कृति के यथार्थ एवं आदर्श रूप को काव्य का विषय बनाने के पक्ष में हैं।

महादेवी वर्मा (1907–1987)

कलात्मक रूचि, स्पष्टवादी, आदर्श गृहिणी, देशभक्त, कुशल प्राध्यापिका, सफल प्रशासिका एवं नारी शिक्षा की प्रेरिका महादेवी वर्मा एक कवयित्री, चित्रकार एवं संगीतज्ञा थीं। उनका समग्र व्यक्तित्व कला के संस्कार से सम्पृक्त था। महादेवी स्वभाव से ही मृदु हँसमुख और विनोदी प्रवृत्ति की थीं। कवि श्री सुमित्रा नन्दन पंत ने उनके बारे में एक बार कहा था कि 'उनका सा विनोदी परिहास प्रिय छायावादियों में दूसरा नहीं मिलता, उनकी निश्छल भावाकुल हँसी प्रसिद्ध है।''[11] व्यक्तिगत अनुभूतियों की तीव्रता और मर्मस्पर्शिता में आधुनिक मीरा महादेवी वर्मा का रचना कौशल अपूर्व है। आधुनिक मीरा का काव्य करूणा की मंदाकिनी है। बौद्ध दर्शन के प्रभााव से महादेवी की करूणा गम्भीर हो गयी है। वे पीड़ा में ही सुख का अनुभव करती हैं। महादेवी दोनों रूपों को स्वीकार करती हैं। एक वह जो मनुष्य के संवेदनशील हृदय को सारे संसार से एक अविच्छिन्न सम्बन्ध में बाँध देता है और दूसरा वह जो काल और सीमा के बन्धन में परे असीम चेतना का क्रन्दन है। पहले के कारण करूणापूर्ण सहानुभूति के

---

[11] डॉ० आदित्य प्रचंडिया–आधुनिक हिन्दी कविता: परम्परा और परिवेश–पृ० 87

शब्द काव्य में अवतरित हुए। दूसरे के कारण महादेवी की रचना में रहस्य का प्रवेश हुआ।

छायावादी काव्य में महादेवी जी की सांस्कृतिक चेतना जीवनव्यापी आध्यात्मिक एकता की खोज में निरन्तर दिखाई देती है। महादेवी का काव्य–चिंतन वैज्ञानिक युग में भी आध्यात्मिक साधना के प्रति जागरूक है। महादेवी की यह दृष्टि रीतिकालीन रूढ़िवादिता एवं द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता के विरूद्व प्रक्रिया के रूप में अग्रसर हुई। महादेवी वर्मा की निम्न रचनाऐं छायावादी विशेषताओं से अनुप्राणित है– 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सान्ध्यगीत', 'दीपशिखा' आदि। 'नीहार' में 1924 से 30 तक की रचनाऐं, 'रश्मि' में 1930 से 32 तक की रचनाऐं, 'नीरजा' में 1931 से 34 तक की रचनाऐं और 'सान्ध्यगीत' में 1934 से 36 तक की रचनाऐं संग्रहीत हैं। इन चारों कृतियों को भी 'यामा' शीर्षक ग्रन्थ में सन्निहित कर दिया गया है। 'दीपशिखा' बाद का रचना–संग्रह है।

महादेवी जी की छायावादी रचनाओं के प्रायः दो ही विषय रहे हैं– प्रकृति प्रेम, 'आध्यात्मिक प्रेम'। उनकी मुक्तक रचनाऐं वेदना मिश्रित स्वर से अनुप्राणित हैं। महादेवी वर्मा की आदि कृति 'नीहार' में कुछ ऐसे सरस, मर्म स्पर्शी गीतों का संग्रह है जिनमें कवयित्री के पीड़ा भरे उदगार व्यंजित हैं। अधिकांश रचनाऐं रहस्यभावना को लेकर लिखी गई हैं, कही–कहीं प्रकृति के सुकमार सौन्दर्य पर भी लेखनी चलाई है। शायद ही कोई गीत ऐसा हो जो आँसू, अवसाद, पीड़ा या वेदना की छाया से वंचित हो।

'रश्मि' में कवयित्री ने जीवन, मृत्यु, सुख और दुःख पर मौलिक चिन्तन को अभिव्यक्ति दी है। इस कृति में व्यक्तिगत वेदनापरक गीतों के साथ–साथ कवयित्री ने मानव और मानव–जीवन से प्रेरित होकर भी अनेक गीत लिखे हैं। अधिकांश गीत अद्वैतवादी विचारधारा और रहस्यवादी भावनाओं से अणु प्रेरित होकर लिखे गए हैं।

'नीरजा' में प्रकृति में मानवी भावनाओं की भव्य झांकियों एवं विरह–वेदना के चित्र प्रस्तुत किये गए हैं। प्रियतम ने जो वियोग, जो वेदना दी है उसने कवयित्री के

हृदय में पर दुःख कातरता का भाव भर दिया है। वेदना–परक गीत ही इसमें अधिक हैं।

'सान्ध्यगीत' में कवयित्री ने सुख–दुःख तथा विरह–मिलन में समन्वय दिखाने का प्रयास किया है, आत्म–परक गीतों की इसमें अधिकता है। जन–जीवन में जाग्रति लाने के लिए इस रचना में कवयित्री ने प्रयास किया है।

महादेवी का सम्पूर्ण काव्य, आरम्भ से अंत तक एक ही धुरी पर केन्द्रित रहा है और वह धुरी करूणा और वेदना की है। इसी धुरी पर अवस्थित रहकर उन्होंने प्रेम, विरह, आत्मनिवेदन, और उल्लास के गीत गाये हैं इसी को केन्द्र बनाकर उन्होंने प्रकृति के कोश से विभिन्न उपादानों को लेकर उन्हें मानवीय भावों से अनुप्राणित करके न जाने कितने रमणीय शब्द–चित्र उकेरे हैं।

रामकुमार वर्मा

डॉ0 रामकुमार वर्मा मूलतया एक कवि हैं। कलाकार ही नहीं वह तो सौन्दर्य के साधक भी हैं। रामकुमार वर्मा जी ने काव्य–कला के साथ जीवन–कला की भी साधना की है। सत्यं, शिवं, सुन्दरं की साधना आपके जीवन और काव्य–दोनों की ही साधना है। शील और मर्यादा के साथ–साथ आपके जीवन में आदर्श और व्यवहार का, पूर्व और पश्चिम का, शक्ति और सौन्दर्य का गजब का सन्तुलन एवं समन्वय है। डॉ0 वर्मा अपनी काव्य साधना में अपने इष्ट देव, शील और सौन्दर्य के आगार भगवान श्री राम की आराधना स्वीकारते हैं। इसी के साथ वर्मा जी का काव्य अधिकतर स्वानुभूतिपरक रहा है और वृत्ति अंतर्मुखी। साथ ही इनके काव्य में प्रकृति प्रेम–रहस्यवाद, वेदना, निराशा, तथा समाज की अपेक्षा न रखने वाला व्यक्तिवाद आदि की प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। इनके रहस्यवाद पर कबीर आदि रहस्यवादी कवियों का प्रभाव है, तथा उसमें निराशा का तीव्र स्वर है। कवि की विरहिणी आत्मा प्रिय–मिलन के लिए व्याकुल है

देव मैं अब भी हूँ अज्ञात

एक स्वप्न बन गई तुम्हारे प्रेम मिलन की बात

तुमसे परिचित होकर भी तुम से दूर हूँ''[12]

वर्मा जी ने अधिकतर प्रकृति के सुकुमार रूप का चित्रण किया है। प्रकृति की नैसर्गिक छटा कवि–मन को एकदम विभोर कर देती है–

''तुम सजीली हो सजाती हो सुहासिनी ये लताएँ

क्यों न कोकिल कंठ मधु ऋतु में तुम्हारे गीत गाएँ।''[13]

वर्मा जी की प्रमुख काव्य रचनाएँ है–'अंजलि', 'रूप राशि', 'चित्तौड़ की चिता', 'अभिशाप', 'निशीथ', 'चित्ररेखा' और 'संकेत' आदि। इनकी कविता में काव्य के दो रूप देखने में आते है। वर्णनात्मक तथा गीतात्मक। इनके गीत–काव्य में गीत के प्रायः सभी तत्त्व मिल जाते हैं। इनकी कुछ कविताऐं–जागरण की ज्योति, तिरस्कार, मौनकरूणा, 'एकलव्य', गुरू–दक्षिणा आदि हैं।

'जागरण की ज्योति' प्रेम रहस्यवादी कविता है, प्रेम को आराधना –साधना का माध्यम बनाकर उसी के आधार पर रहस्यवादी शैली की प्रेमाभिव्यंजना करना ही प्रेम रहस्यवाद है।

'तिरस्कार' में कवि विश्व के सृष्टिकर्ता, रक्षक तथा नियंता एक ईश्वर पर विश्वास करने वालों का विरोध करता है और कहता है कि संसार स्वेच्छा से निर्मित है। मानव स्वयं अपने भाग्य का विधाता है। परंपरागत विचारों का इस कविता में तिरस्कार किया गया है।

---

[12] डॉ० शिव कुमार शर्मा–हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ पृ० 504

[13] वही

'मौन करूणा', 'तिरस्कार' के विपरीत परमप्रेममय आराध्य की प्रार्थना करती है। कवि की सहज आस्था इस कविता में व्यक्त हुई है। तिरस्कार का निरीश्वरवादी विद्रोह यहाँ करूणा का अभ्यर्थी बना है।

'एकलव्यः गुरूदक्षिणा' नामक कविता में रामकुमार वर्मा ने उपेक्षित शूद्र–प्रतिभा के आदर्श को रेखांकित किया है। गुरू द्रोणाचार्य की क्रीत विचार-धारा के कारण एकलव्य की धनुर्विद्या नष्ट हो गयी है। कवि ने इसे भावुकता के स्तर पर बड़े सहज ढंग से स्पष्ट किया है। गुरू का आदर्श वेतनभोगी होने के कारण नैतिकता की सीमा से बाहर हो गया है।

निष्कर्षतः रामकुमार वर्मा जी ने अपने जिस सौन्दर्य को अन्तस में अनुभव किया है, उसी को अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम से समष्टि बोध का विषय बनाया है। उनकी रचनाओं में प्रकृति सौन्दर्य, नारी–सौन्दर्य आदि के अनेकानेक सजीव चित्र हैं तथापि उनमें स्थूलता एवं मांसलता की गन्ध के अभिदर्शन प्रायः नहीं होते हैं। वर्मा जी सौन्दर्य को बाहर की नहीं मन की वस्तु के रूप में स्वीकारते हैं।

भगवतीचरण वर्मा

भगवतीचरण वर्मा आधुनिक भारतीय साहित्य के उन गिने–चुने कृतिकारों में रहे हैं जो साहित्य को जीवन के ही समान व्यापक और बहुरंगी समझ कर उससे जुड़ते हैं और केवल एक या दो विधाओं या विषयों को अपनी सर्जना का माध्यम बनाकर अपनी सम्भावनाओं को परिसीमित नहीं होने देते। भगवतीचरण वर्मा के साहित्य में मानवीय स्थितियों की गहरी अन्तर्दृष्टि और ऐतिहासिक परिवर्तनों के बीच मानव नियति के एक विशेष परिदर्शन (आउट लुक) का बड़ा ही गतिशील परिचय मिलता है।

कवि का पहला रूप प्रेम और सौन्दर्य को लेकर है और दूसरा रूप जगत पर दृष्टि डालना है। कवि ने अपने जीवन में उत्थान–पतन, वैभव–दीनता, सौन्दर्य श्रीहीनता, अर्थात् परिस्थितियों का उतार–चढ़ाव को उच्च स्तर पर अपने साहित्य में अत्यंत प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है।

छायावाद–युग में कुछ तो ऐसे महाकवि पाए जाते हैं जिन्होंने छायावाद को गौरव प्रदान किया और कुछ ऐसे हैं जो उनकी शैली का अनुकरण करने के कारण या तो मिट गए या प्रसिद्ध नहीं हो पाए; पर कुछ ऐसे कवि भी उस काल में साधना कर रहे थे, जिनकी अंतर्दृष्टि ने यह पहचान लिया था कि इस वाद की ऊँचाई छुयी जा चुकी है। अतः अपने चरणों की किसी प्रकार की छाप यदि छोड़ते हैं तो किसी अन्य दिशा में मुड़ना और बढ़ना चाहिए। भगवतीचरण वर्मा ऐसे ही कवियों में थे। छायावाद के भीतर रहकर उन्होंने उसके प्रति विद्रोह किया और उस पथ को प्रशस्त किया जिसे पकड़ कर उनके बाद के कई कवि आगे बढ़ चले। काल्पनिक और अलौकिक विषयों के स्थान पर इन्होंने नित्य जीवन की मार्मिक घटनाएँ लीं और अभिव्यक्ति पक्ष को सरल एवं बोधगम्य बनाया।

भगवतीचरण वर्मा ने बच्चन की तरह छायावादी रहस्यात्मकता का परित्याग करते हुए प्रेम, मस्ती एवं उल्लास भरे यौवन के राग अलापे हैं। इनके गीतों में किसी प्रकार की कृत्रिम नैतिकता के बंधन नहीं हैं —

"हम दीवानों की क्या हस्ती आज यहाँ कल वहाँ चले।

मस्ती का आलम साथ चला हम धूल उड़ाते जहाँ चले।"[14]

वर्मा जी की कृतियाँ 'मधुकण' 'प्रेम संगीत' और 'मानव' हैं । मधुकण और प्रेम संगीत में मस्ती का आलम देखा जा सकता है। किन्तु उनकी रचना मानव में खुमार की यह दशा एकदम दूर होती हुई दृष्टिगोचर होती है। लगता है कि कवि के मादक स्वप्नों का नीड़ एकदम टूट ही गया हो। इनके कविता संग्रह 'मानव' में शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूतिमयी करूणा का सहज उद्रेक हुआ है। उनकी कविता "भैंसागाड़ी" में ग्रामों की दीन–दशा का कारूणिक चित्र उपस्थित हुआ है।

हम कह सकते हैं कि भगवतीचरण वर्मा के काव्य में प्रकृति प्रेम और सौन्दर्य की अपार झलक दृष्टिगत होती है। साथ ही साथ देखा जा सकता है कि वर्मा जी

---

[14] डॉ शिवकुमार शर्मा–हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ–पृ० 506

हिन्दी में अपने ढंग के अकेले ही नियतिवादी हैं जो निराशा के समर्थक न होकर, जीवन के प्रति विभोरता तटस्थता, लापरवाही और मस्ती का दृष्टिकोण बनाये रखने का साधन है।

हमें यहाँ इतना कहना ही अलम होगा कि भगवतीचरण वर्मा हिन्दी छायावाद के अन्तर्गत होते हुए भी उससे दिशान्तर की ओर उन्मुख हैं। उनमें छायावादी सौन्दर्यबोध के साथ कुछ प्रगतिगामी स्वर भी सुने जा सकते हैं। हमें यहाँ उन स्वरों का संकेत भर ही अभीष्ट है, विस्तार से नहीं। कारण यह कि यह शोध 'प्रबंध' के विभिन्न अध्यायों में अन्तर्मुक्त होगा। अतः पुनरावृत्ति से बचते हुए हम यहाँ संकेत भर से ही तोष कर लेते हैं।